शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 जून 2017
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

शैव दर्शन में सूक्ष्म शरीर की अवधारणा

अनिल कुमार (शोधार्थी)
विशिष्ट संस्कृत अध्ययन केन्द्र
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय

शोध संक्षेप

भारत में शैव दर्शन अत्यंत प्राचीन है। ऋग्वेद में उल्लेखित महामृत्युंजय से इसकी प्राचीनता स्वत: सिद्ध है। इसके साथ ही भारत में ब्रह्म, आत्मा, जीव और जगत की अवधारणा पर भी प्राचीन काल से चिंतन-मनन किया जाता रहा है। इसी में से पुनर्जम की अवधारणा विकसित हुई। जिसका चार्वाक को छोड़कर सभी दर्शनों में उल्लेख मिलता है। प्रस्तुत शोध पत्र में विभिन्न दार्शनिक चिंतन और शैव दर्शन में सूक्ष्म शरीर की अवधारणा पर विचार किया गया है।

भूमिका

भारतीय ज्ञान परम्परा में पुनर्जन्म की अवधारणा को चार्वाक को छोड़कर प्राय: सभी दर्शन स्वीकार करते हैं। यह पुनर्जन्म किसका का होता है, इसके उत्तर में सभी दार्शनिक आत्मा के पुनर्जन्म को स्वीकार करते हैं। बौद्ध दर्शन आलयविज्ञान का पुनर्जन्म स्वीकार करता है। श्रीमद्भगवद् गीता में श्रीकृष्ण भी कहते हैं :

वासांसी जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि।

तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्यन्यानि संयाति नवानि देही।। (भगवद्गीता,2.22)

अर्थात् जैसे मनुष्य पुराने वस्त्रों को त्यागकर दूसरे नये वस्त्रों को ग्रहण करता है, वैसे ही जीवात्मा पुराने शरीर को त्यागकर नवीन शरीर को प्राप्त करती है। अर्थात् स्थूल शरीर के माध्यम से आत्मा नये-नये वस्त्र धारण करती रहती है। आत्मा जिसमें अधिष्ठित होकर स्थूल शरीर धारण करती है वह सूक्ष्म शरीर होता है। भारतीय ज्ञान परम्परा में उसे भिन्न-भिन्न नाम से अभिहित किया है, जैसे बौद्ध साहित्य दीघनिकाय के पौठपाद सुत्त में सूक्ष्म शरीर को मनोमय आत्मप्रतिलाभ, सर्वदर्शनसंग्रह के अनुसार शैव दर्शन में पौर्यष्टक, सांख्य दर्शन में लिंग शरीर अथवा सूक्ष्म शरीर तथा वेदान्त.दर्शन में सूक्ष्म शरीर शब्दों से सम्बोधित करते हैं। अब प्रश्न उठता है कि सूक्ष्म शरीर की आवश्यकता क्यों है ? इसके निराकरण में कहा गया है कि आत्मा शुद्ध एवं चेतन है तथा यह साधनहीन रहकर अचेतन जगत् से भोगादि के सम्पर्क स्थापित करने में यह असमर्थ है। अतः भोगादि के लिए एक स्थूल शरीर को छोड़कर दूसरे स्थूल शरीर में जाने के लिए भी आत्मा को साधन की अपेक्षा रहती है। वह साधन सूक्ष्म शरीर ही है जो जन्म-मरण की गति में यह हमेशा आत्मा के साथ बना रहता है। इसी कारण इसे आत्मा का वाहन भी कहा जाता है। यह आत्मा तथा स्थूल शरीर के मध्य संयोजक कड़ी हमेशा बनी रहती है। समस्त सर्गकाल में आत्मा इसी में स्थित होकर अपनी समस्त गतिविधियों को सम्पन्न करती रहती है।

शैव दर्शन में सूक्ष्म शरीर

शैव आगम ग्रन्थों मे भी सूक्ष्म शरीर की सत्ता को स्वीकार किया गया है। यहाँ कर्मादि से संबद्ध

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 जून 2017
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

परमेश्वर को संसार का कारण माना गया है। इसमें पति (ईश्वर) पशु (जीव) तथा पाश (बंधन) ये तीन पदार्थ स्वीकार किए जाते हैं। पति से आशय शिव से है जो स्वतंत्र एवं चेतन है। पाश संसार है। पशु स्वतंत्र नहीं है। जो अणु नहीं है, क्षेत्रज्ञ आदि पर्यायवाची शब्दों से जिसका बोध हो। ये पशु निरन्तर पाश से ग्रसित है। पाश नाश पर शिवत्व प्राप्त होता है। पाश नाश अनादि मुक्त परमेश्वर की कृपा से होता है। मुक्त परमेश्वर का शरीर पांच मंत्रों का बना होता है। सर्वदर्शनसंग्रह के शैवदर्शन विभाग में जीव के तीन भेद विज्ञानाकल, प्रलयाकल और सकलाकल होते हैं। प्रलयकाल जीव प्रलय के द्वारा इसमें कलादि शरीर के प्रयोजक का विनाश होता है। इसमें मल के साथ कर्म भी रहता है। यह दो प्रकार का है. 1 पक्वपाशद्वय : जिसके दो पाश परिपक्व हो गए हों। जब पाश परिपक्व हो जाते हैं तो भोग की हानि होती है तथा जीव मुक्त हो जाते हैं। अत: ये मोक्ष प्राप्त करते हैं। 2 तद्विलक्षण :. जिसेक पाश परिपक्व न हुए हों। यह शरीर प्राप्त करके कर्म के वश में होकर नाना प्रकार के जन्म प्राप्त करता है। इस शरीर को पुर्यष्टक कहा गया है। तत्त्वप्रकाशकार भोजराज ने पुर्यष्टक का लक्षण दिया है स्यातत्पुर्यष्टकमन्तःकरणं धीकर्मकरणानि। अर्थात् अन्त:करण (मन, बुद्धि, अहंकार तथा सात कलादि), धी अर्थात् बुद्धि के कर्म (पांचभूतपांचतन्मात्र) और करण अर्थात् साधन (10 इन्द्रियां, क्योंकि यह ज्ञान व कर्म के साधन हैं). इसे पुर्यष्टक कहते हैं। कलादि से तात्पर्य पुरूष की भोग क्रिया में अनिवार्य रूप से विद्यमान कला, काल, नियति, विद्या, राग, प्रकृति और गुण इन सात को उसी से उपलक्षित किया जाता है। इनमें काल भोगों की सीमा का परिच्छेद कलन है। उसके कारण माया का प्रथम विकार काल को माना गया है, जो क्षण आदि प्रतीतियों से जाना जाता है।1 यह तीन प्रकार का है.: सृष्टिकाल, स्थितिकाल और संहारकाल। इनकी दृष्टि में काल को अनित्य माना गया है। नियति माया का दूसरा विकार है जो कि नियमन का कारण है।2 अब यहां प्रश्न उठता है किसका नियमन करती है। इसके उत्तर में कहा गया है कि जो व्यक्ति दुष्कर्म करता है उसे अशुभ फलों से युक्त करना, सुकृतफल से अकर्त्ता को व्यावृत्त करना और उसके शरीरादि से अन्य पुरूष सम्बन्धि भोग न होने देना का नियमन करता है। नियति ही सुकृति पुरूष को सुकृत फलों से युक्त करना तथा दुष्कृत फलों से व्यावृत्त करके अन्य के कर्म.फलों से वियुक्त रखती है।3 उदाहरण के लिए जिस प्रकार कृषक को कृषिफल से सम्बध करने में कर्म नियामक नही होता उसी प्रकार सुकृत और दुष्कृत कर्मो के फल से पुरूष को सम्बद्ध करने वह स्वयं नियामक नही हो सकता। कर्म से फल की दूरी रहते हुए भी नियति ही पुरूष को फलयुक्त करती है।4 यह पुर्यष्ठक को पुनर्जन्म लेने वाले जीव को उसके कर्मो के साथ नियमन करने का कार्य नियति का है। कला आत्मा के साक्षात्काररूप चैतन्य को अभिव्यक्त करने वाला तत्त्व है। यह आच्छादक मल की निवृत्ति को अभिव्यक्त करता है।5 आत्मा के ज्ञान और क्रिया को चैतन्य शक्ति कहा जाता है। उस शक्ति को सम्पूर्ण रूप से अनावृत्त न करके कर्म के अनुसार अंशतः व्यक्त करने वाला तत्त्व कला है।6 अर्थात कला जीव में जन्म.जन्मान्तर चैतन्य तत्त्व को अभिव्यक्त करने वाला तत्त्व है। अघोरशिवाचार्य के अनुसार पुर्यष्टक शरीर का लक्षणकृपुर्यष्टकं नाम प्रतिपुरूषं नियतः,

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 जून 2017
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

सर्गादारभ्य कल्पान्तं मोक्षान्तं वा स्थितः पृथिव्यादिकलापर्यन्तास्त्रिंशत्त्वात्मक सूक्ष्मो देहः। अर्थात् पुर्यष्टक उस सूक्ष्म देह (सूक्ष्म शरीर) को कहते हैं, जो प्रत्येक पुरूष के लिए नियत रहती हैं, सृष्टि के आरम्भ से लेकर कल्प के अंत तक या मोक्ष के अंत तक स्थिर रहता है और पृथ्वी आदि कलापर्यन्त तीस तत्त्वों से निर्मित होती है। श्रीमत कालोन्तर आगम में पुर्यष्टक का लक्षण इनसे भिन्न दिया गया है :

शब्दः स्पर्शस्तथा रूपं रसो गंधश्च पञ्चकम्। बुद्धिर्मनस्त्वहंकारः पुर्यष्टकमुदाहृतम्।।

अर्थात् शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंध इन पांच समूहों तथा बुद्धि, मन एवं अहंकार.ये मिलकर पुर्यष्टक हैं। पुर्यष्टक में पुरित्र शरीरे, अष्टकम् ये दो शब्द हैं। इसका आशय है कि शरीर में आठ का ही अस्तित्व है। किन्तु तीस तत्त्व भी पुर्यष्टक से अभिहित हैं। पञ्च महाभूत, पञ्च तन्मात्रा, पञ्च ज्ञानेन्द्रियां, पञ्च कर्मेन्द्रियां तथा तीन अन्तःकरण. ये पाँच वर्ग और इनके कारणस्वरूप तीन गुण (1.प्रधान.समस्त जगत का मूल कारण, 2.प्रकृति, 3 कलादि, पांच का वर्ग) मिलाकर आठ वर्ग हो जाते हैं। इन्हें ही पौर्यष्टक (सूक्ष्म शरीर) कहा जाता है। पुर्यष्टक से युक्त तथा विशेष पुण्य करनेवाले कुछ लोगों पर दया करके महेश्वर अंततः उन्हें इसी संसार से भुवनपति का पद देते हैं।7

सन्दर्भ ग्रन्थ

1 भोगेयत्तापरिच्छेदात्मकस्य कलनस्य हेतुः कालो लवत्रुट्यादिप्रतीतिविशेष्यो मायायाः प्राथमिको विकारः। शैवतत्त्वमीमांसा, पृष्ठ 93-94

2 नियमनस्य कारणं तत्त्वं नियतिः। इयं च मायाया एव द्वितीयो विकारः। वही, पृष्ठ 96

3 नियमनं तु दुष्कर्मकर्तुस्तत्फलेन योजनम्, सुकृतफलास्याकर्तृसम्बन्धव्यावर्तनम्, तच्छरीरादेः पुरूषान्तसम्बन्धि भोगाजननं च। इदमेव नियतितत्त्वे प्रमाणम्। वही, पृष्ठ 96

4 न कर्म स्वफलं पुंसां सम्बन्धयितुमर्हति। कर्मत्वात् कृषिवत् तस्मान्नेह कर्म नियामकम्॥ वही, पृष्ठ 98

5 आत्मनो दृक्क्रियारूप.चैतन्याभिव्यञ्जकं तत्त्वं कला। अभिव्यक्तिश्चाच्छादकमलनिवृत्तिः। वही,पृष्ठ 98

6 चैतन्यं ज्ञत्व.कर्तृत्वरूपं तद्बलामात्मनः। कलया व्यज्यते तत् तु तस्यैव हि तिरस्कृतम्। सर्वात्मना कला नैतच्चैतन्यं व्यञ्जयत्यणोः। किन्तु कर्मानुसारेण कला वृत्त्यैकदेशतः। वही, पृष्ठ 99

7 तथापि कथमस्य पुर्यष्टकत्वम् भूततन्मात्रबुद्धन्द्रिकर्मेन्द्रियान्तःकरणसंज्ञैः पञ्चभिवर्गैः चारब्धत्वादित्यविरोधः। तत्र पुर्ष्टकयुतान्विशिष्टपुण्यसम्पन्नान काश्चिदनुगृह्यभुवनपतित्वमत्र महेश्वरोऽनन्तः प्रच्छति। सर्वदर्शनसंग्रह का शैवविभाग